International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 13-09-2024, Accepted: 14-10-2024, Published: 29-10-2024
Volume 10, Issue 4, 2024, Page No. 13-15

ज्ञान चतुर्वेदी के व्यंग्य उपन्यास 'पागलखाना' में बाज़ारवाद की सम्प्रभुता का विश्लेषण व प्रभाव

जानकी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
आधुनिक युग को बाज़ार का युग कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए। वैश्वीकरण के इस दौर में दिन–प्रतिदिन बढ़ते औद्योगीकरण, व्यवसायीकरण, प्रतियोगिता के कारण बाज़ार का हमारे समाज में विशेष स्थान हो गया है। बाज़ार ने हमारी सोच–विचार, गतिविधियों, पसंद, आदि को काफी हद तक प्रभावित किया है। नतीजतन, अपने प्रयोग की आवश्यक वस्तुओं और सेवाओं की खरीदारी के साथ हम विलसिता की महंगी वस्तुओं को भी जाने–अनजाने अपने जीवन में शामिल करने में लगे हुए है। बाज़ार की ताकते, जीवन की बदलती प्राथमिकताओं और स्थितियों के बीच अपना वर्चस्व स्थापित करना जानती है। सोशल मीडिया जैसे इंस्टाग्राम, फेसबुक आदि इसमें विशेष भूमिका निभा रहें है। टी.वी, ओ.टी.टी, यूट्यूब जैसे प्लेटफॉर्म पर प्रसारित होने वाले धारावाहिकों,विज्ञापनों जिनमे वर्जनाओं और पारंपरिक मूल्यों से मुक्त चमक–धमक भरी पाश्चात्य शैली की जीवनशैली दिखाई जाती है और उसी जिंदगी को हम लोग वास्तविकता में अपने जीवन में उतारना चाहते है। आज संतोष ओर संयम पर आधारित मूल्य खंडित हो रहे है और इनके स्थान पर भोगवाद और बाजारवाद प्रबल हो रहा है। युवा वर्ग में आक्रोश, आक्रामकता, असंतोष, हिंसक प्रवृतियां बढ़ रही है। व्यंग्यकार ज्ञान चतुर्वेदी ने इसी बाजारवाद के यथार्थ रूप को अपने व्यंग्य के द्वारा हमारे सामने रखा है। लेखक अपने उपन्यास 'पागलखाना' में समाज में पूंजीवाद, बाज़ारवाद और सरकार के बीच संबंध को व्यंग्य के माध्यम से एक पागलों की दुनिया के जरिए समझाने का प्रयास करते हैं। ज्ञान चतुर्वेदी अक्सर अपने उपन्यासों में समाज के असल चेहरे को व्यंग्य के माध्यम से दिखाते हैं लेकिन पागलखाना द्वारा वह उससे एक कदम आगे जाते हुए पाठक को सच्चाई से अवगत कराने की कोशिश करते हैं।

मूल शब्दः ज्ञान चतुर्वेदी, व्यंग्य, पागलखाना, बाज़ार, सत्ता, सरकार, कानून, संस्कृति, धर्म, फैंटेसी, क्लीनिक, डॉक्टर

मूल आलेख

21 वी सदी के इस युग में प्रतिदिन नित–नए आविष्कार होते है या कहें आधुनिक युग आविष्कारों का युग हैं। जो मानव जीवन को अत्यधिक आरामदायक, सरल और सुविधापूर्ण बना रहे है जिसमें बाज़ार महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। अगर प्रत्यक्ष रूप से देखे तो लोगों के द्वारा, लोगों के लिए बाज़ार कार्य करता है परंतु धीरे–धीरे लोगों के जीवन को बाज़ार ने अपने नियंत्रण में कर लिया है। फैशनयुगीन जीवनशैली, दिखावटीपूर्ण जीवन, एक–दूसरे से आगे बढ़ने की होड़, विलासितापूर्ण जीवन जीने की चाह ने बाजारवाद के पागलपन का मार्ग प्रशस्त किया है। इसलिए यह कहना उचित होगा की ज्ञान चतुर्वेदी ने अपने उपन्यास का शीर्षक "पागलखाना" दिया है जो एक व्यंग्य उपन्यास है। व्यंग्य एक प्रकार का लेखन कर्म है। इसमें विसंगतियों को खोजकर उसके अंतर्गत तत्वों को उद्घाटित किया जाता है। व्यंग्य लेखन मानवीय चेतना को झकझोरता है। वस्तुतरू व्यंग्य समाज के जनमानस के चरित्र में आयी रोगग्रस्तता को पहचानता है और उसे दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार व्यंग्य गद्य साहित्य की एक ऐसी विधा है जो जनमानस को व्यंग्य के माध्यम से जीवन में व्याप्त विसंगतियों पर प्रहार करती है।इसमें समसामयिक, सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार, आडंबर, अवसरवादिता, अंधविश्वास आदि दुष्प्रवृत्ति तथा विसंगतियों पर प्रहार करते हुए परिहास या व्यंग्य के रूप में व्यक्त करना होता है।

इस पुस्तक के आवरण पर ही लिखा है की "उन पागलों की कथा जो जीवन को बाज़ार से बड़ा मानते हैं।'' यह वाक्य स्पष्ट कर देता है कि लेखक आपको किस दिशा में सोचने के लिए प्रेरित कर रहा है। बाज़ार अब समाज के किनारे बसा ग्राहक की राह देखता एक सुविधा–तंत्र भर नहीं है। वह समझने लगा है कि हमें क्या चाहिए यह वही तय करे। इसके लिए उसने हमारी भाषा को हमसे बेहतर ढंग से समझ लिया है, हमारे इंस्टिंक्टस को पढ़ा है, समाज के रूप में हमारी मानवीय कमज़ोरियों, प्यार, घृणा, गुस्से, घमंड की संरचना को जान लिया है। वह इसकी भूमिका 'ताकि सनद रहे' में कहते है की "बाजारवाद पर किसी भी तरह से यदि मै लिखता भी तो शायद वह पूर्ण सत्य होते हुए भी सपाटबयानी– सा कुछ रिपोतार्ज बन जाता।''[1] इसलिए लेखक ने "पागलखाना" उपन्यास को फैंटेसी शैली में लिखा है।

चिकित्सा क्षेत्र और बाज़ारवाद

हमारे यहां डॉक्टरों को भगवान का रूप समझा जाता है जैसा की हिंदी फिल्मों में भी हम देखते हुए आए हैं। ईश्वर के बाद लोगों को सबसे अधिक भरोसा डॉक्टर पर होता है परंतु जैसा कि हम देख ही रहे हैं बाजारवाद हर क्षेत्र पर कब्जा कर रहा है तो चिकित्सा क्षेत्र भी इस से अछूता नहीं रह गया है और यह अब एक व्यवसाय बनता जा रहा है। पर हम हर किसी को समान पैमाने मे नहीं आंक सकते। उपन्यास में लेखक ने चिकित्सा क्षेत्र के भी विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला है। जैसा की शीर्षक ही "पागलखाना" है और उपन्यास शुरू भी होता है एक पागल व्यक्ति जो वास्तव में पागल है या नहीं, उसे एक साइकाइट्रिक के क्लीनिक पर ले जाया जाता है और कथा आगे बढ़ती है की किस प्रकार बाजार को समझने वाले व्यक्ति को पागल समझ कर उसका इलाज किया जा रहा है। आज के इस दौर में अवसाद, मानसिक तनाव सामान्य सी बात बनती जा रही है और लोगों को इलाज के लिए क्लीनिक और अस्पतालों में रोगियों का तांता लगा रहता है। लेखक क्लीनिक की भव्यता को कुछ इस प्रकार बयां करते हैं "किसी भव्य शोरूम जैसी है यह क्लीनिक। बड़े–बड़े कांच दीवारों पर ऐसी मायावी रोशनी जो दिखाती कम है, छुपाती ज्यादा है। बेहद आलीशान फिल्मों में जड़े प्रशंसा पत्र और डिग्रियां इतनी सुंदर है यह, प्रमाण पत्र की देखते ही इनके नकली होने का एहसास होता है।''[2] आज के इस आधुनिक युग में किस प्रकार दिखावटी भव्यता द्वारा लोगों को पागल बनाया

जाता है चाहे वह नकली हो पर इस प्रकार से प्रस्तुत किया जाता है कि वह वास्तविक व असली दिखाई देता है। लेखक सुरेश कान्त भी लिखते हैं की " व्यंग्य में मानव ओर समाज का विवर्ण (ल्यूरिड) रंगों में खाका खींचा जाता है। व्यंग्य अपने लक्ष्यों को ज्यों का त्यों रख देता है, उसके साथ किसी औपचारिकता का व्यवहार नहीं करता ।"[3] इसी प्रकार लेखक बाजार व्यवस्था को ज्यों का त्यों अपनी व्यंग्य उपन्यास के माध्यम से समाज को अवगत कर रहे हैं। यह बाज़ार हमें अपनी और आकर्षित करता है और हम इसके जाल में फंसते चले जाते हैं। "तीन तरफ शानदार सोफे लगे हैं यहां ऐसे गद्देदार सोफे हैं कि बैठो तो धंस जाओ, और फिर धंसते ही चले जाओ। नितम्ब पाताल में, सिर आसमान में ।"[4] इस उपन्यास में इस तरह के वाक्य पाठकों को व्यंग्य के साथ ही, नई सोच और समझ विकसित करने में मदद करते है।

भारतीय संस्कृति और बाज़ारवाद

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीन संस्कृतियों में से एक है। भारतीय संस्कृति अपनी विशाल भौगोलिक स्थिति के समान अलग–अलग है। यहाँ के लोग अलग–अलग भाषाएँ बोलते हैं, अलग–अलग तरह के कपड़े पहनते हैं, भिन्न–भिन्न धर्मों का पालन करते हैं, अलग–अलग भोजन करते हैं किंतु उनका स्वभाव एक जैसा होता है। चाहे कोई खुशी का अवसर हो या कोई दुख का क्षण, लोग पूरे दिल से इसमें भाग लेते हैं। भारतीय संस्कृति के बारे में पं. मदनमोहन मालवीय का कहना है कि ''भारतीय सभ्यता और संस्कृति की विशालता और उसकी महत्ता तो संपूर्ण मानव के साथ तादात्म्य संबंध स्थापित करने अर्थात् 'वसुधैव कुटुंबकम' की पवित्र भावना में निहित है।"[5] परंतु भारतीय संस्कृति पर भी बाज़ार ने अपना कब्जा कर लिया है। हंसना, बोलना, व्यवहार, खानपान, साहित्य, संस्कृति, विचार और संगीत सभी तेज रेले में बह रहे थे, वैश्वीकरण के बाज़ार ने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। "बाज़ार बस्ती में घुस आया था। बाढ़ बस्ती में आ चुकी थी। और सारी बस्ती इसे तमाशा मान, किनारे खड़े होकर इसका मजा ले रही थी।''[6] लोग जानते थे कि धीरे–धीरे बाज़ार हमारी सभ्यता और संस्कृति पर कब्जा कर रहा है लेकिन लोग इसका विरोध करने की बजाय इसका उत्सव मना रहे थे क्योंकि वह जानते थे की बाज़ार का विरोध करने पर वह पागल कहलाएंगे। "हर तरफ सिर्फ बस बाज़ार ही बाज़ार था, घर डूब रहे थे, संबंध तो सबसे पहले डूबे। दोस्तियां गले–गले तक इस मट मैले पानी में थी।''[7] वैश्वीकरण के इस दौर में, एक दूसरे से आगे बढ़ने की होड़ में अपने आप को विकसित, उच्च दिखाने के लिए हम पाश्चात्य संस्कृति को बिना सोचे समझे अपना रहे हैं और अपनी संस्कृति को कहीं ना कहीं ताक पर रख रहे हैं, अपने मूल्यों को खोते जा रहे हैं और इन सब में सबसे अधिक योगदान बाज़ार का है।

सरकार, सत्ता, कानून और बाज़ारवाद

कुछ प्रश्न जो पाठको द्वारा उठाए जाने थे उन प्रश्नों को लेखक ने पाठकों की तरफ से पूछा तथा उनके जवाब व्यंग के माध्यम से देने की कोशिश की है। " जैसे कि बाज़ार जब चारों तरफ यों कब्जा कर रहा था तब सरकार कहाँ थी? उसने इस अनर्थ को रोका क्यों नहीं? संविधान का क्या हुआ?''[8] पूंजीवाद, बाज़ारवाद और सरकार के बीच संबंध को एक पागलों की दुनिया के जरिए समझाने का प्रयास करते हैं। उपन्यास 'पागलखाना' में सरकार और बाज़ार के कारण पागल हुए व्यक्तियों की बात करते हैं या उन चुनिंदा लोगों के बारे में बताते हैं जो बाज़ार को पहचान गए हैं और इस से छुपना चाहते है, बाज़ार से कही दूर अपनी दुनिया बसाना चाहते है और इसकी जदोजहद में कोई सुरंग तो, तो कोई गटर के अंदर दुनिया बनाने के लिए संघर्ष कर रहे है वास्तव में इन सब पागलों का लक्ष्य एक ही है बाज़ार से कही दूर चले जाना जो मुमकिन नहीं है "यह सोच सत्ता का भोलापन था, कमीनापन था काइयांपन, पता नहीं, पर यह स्पष्ट था कि सरकार बाज़ार के साथ मिल गई थी।'' "बस कोई ऐसा ताला दो कि जिसे ना तो सरकार खोल पाए ना ही बाजार।''[9] उपन्यास के पात्रों द्वारा कहे गए यह सभी वाक्य बताते हैं कि बाज़ार इतना मजबूत हो रहा था कि अगर सरकार को भी देश में बने रहना है तो उसे बाज़ार के साथ मिलकर ही आगे बढ़ना होगा। अगर कोई इंसान ये सोचता है कि उसने मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री का चयन किया, कोई अधिकारी किसी बड़े ओहदे पर नियुक्त किया गया। तो ये, उसकी भूल है। दरअसल, बाज़ार ये तय करता है कि किसे, कब और कहां रखा जाए।

मध्यमवर्गीय व्यक्ति और बाज़ारवाद

एक मध्यमवर्गीय व्यक्ति जो अपनी गृहस्थी, ऑफिस, बच्चे, नौकरी, संगीत, साहित्य, कला में खुश था। अपना जीवन यापन कर रहा था उसकी जिंदगी में भी किस प्रकार बाज़ार आया और उसके सपनों को अपने साथ ले गया। लोन, क्रेडिट कार्ड, सिबिल स्कोर, शेयर मार्केट, ये बाज़ार द्वारा दी जाने वाली सुविधाएं, कब बोझ बन गई इसका पता व्यक्ति को खुद नहीं चला और वह अपनी स्मृतियों से दूर होता चला गया और सवाल उठाने पर साइकेटरिस्ट, बोलचाल की भाषा में पागलों के डॉक्टर के पास तक उसे जाना पड़ गया। बाज़ार में एक नई कार आई, जो हैसियत का प्रतीक बन गई थी सभी लोग वह कार खरीदने लगे। एक मध्यमवर्गीय व्यक्ति ने इसी हैसियत के लिए इस कार को लेने के लिए के लिए बाज़ार में उपलब्ध कर्ज की सेवा ली, कार आ गयी, किस्तें बनी, फिर बाज़ार से खरीदारी बढ़ी,वे बाज़ार से अल्लम गल्लम चीज कर्ज पर खरीदने और उनकी किस्तें चुकाने के लिए ही जीने लगें, किस्तें बढ़ी, किस्तें चुकाने का नया उपाय मिला – शेयर बाजार। इस तरह बाज़ार घर में आता गया और सब कुछ बाज़ार की गिरफ्त में। उनकी स्मृतियां धीरे धीरे गायब हो रही थी और बाज़ार हमारे मस्तिष्क मे, चेतना में सिर्फ उपभोग ओर विलासिता को कायम करना चाहता है और काफी हद तक वह इसमें सफल भी हुआ है।

बाज़ारवादी व्यवस्था का मनुष्य जीवन पर बढ़ता प्रभाव

शहरों में रहने वालों के लिए विशाल शॉपिंग मॉल, मल्टीप्लेक्स, ग्रॉसरी स्टोर इत्यादि सामान्य सा दृश्य है जो शहरों की समृद्धि और शहर के शहर होने का सूचक है। गाँवों से लोगों का शहरों में पलायन कभी तो मजबूरीवश रोजगार की तलाश में होता रहा है, तो कभी शहरों की चकाचौंध लोगों को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है और इन सब में बाज़ार को फायदा होता है। शहरों में बढ़ती हुई आबादी जो बाज़ार के लिए बहुत ही सकारात्मक, लाभदायक साबित होती है। व्यंग्य लेखक शरद जोशी द्वारा भी बाजार व्यवस्था पर व्यंग्य किए गये है वह लिखते है "कई बार लगता है इस असार संसार में हमारा जन्म केवल सामान खरीदने के लिए हुआ है। हम मनुष्य हैं और मनुष्य के रूप में ग्राहक बने रहने के लिए अभिशप्त है।''[10] इस उपन्यास में भी किस प्रकार बाज़ार का हमारी हर समस्या का समाधान ढूंढ लेने की क्षमता को व्यंग्य के माध्यम से उजागर किया गया है। इस वाक्य से हर व्यक्ति परिचित होगा, हम आये दिन अपनी रोजाना जिंदगी में इस वाक्य से रूबरू होते है "मे आई हेल्प यू सर।''[11] अर्थात हमें मदद जरूर ही मिलेगी बाज़ार के कारिंदे हमें यह आश्वासन देते है और इन कारिंदों के चलते आम व्यक्ति कुछ ऐसी वस्तुएं या सेवाओं को बाज़ार से खरीद लेते है और बाद में पछताते हैं। इस उपन्यास के अध्याय में बाज़ार अपनी गुणवत्ता का व्याख्यान कर रहा है "जी, ये ऐसा मजबूत है कि बस कहीं भी लगाइए और भूल जाइए ।''[12] परंतु अंकल जी, अर्थात सेल्समैन इसी

नाम से ही पागल पात्र को संबोधित कर उन्हे ताले की विशेषतायें बता रहे है पर अंकल जी बहुत समझदार वाले पागल है वह बाज़ार के इस खेल से अवगत है। "जीवन पर जब तक तुम पूरा कब्जा नहीं करोगे आदमी यूं ही फालतू सोचता रहेगा। आदमी हंसे, रोए उठे, बैठे सोचे, करें–सब बाज़ार के हाथ होना चाहिए जब तक वह सुनहरा दिन नहीं आता हमें सतर्क रहना होगा।''[13] उपन्यास के यह सभी वाक्य गहन सोच के लिए प्रेरित करते है आधुनिक युग का बाज़ार हमारे जीवन को किस प्रकार प्रभावित कर रहा है, इसके प्रति जागरूक करते है। बाज़ार सुरंग खोदने वाले, सपनों के बारे में सोचने वाले, मैनहोल में दूसरी दुनिया बनाने वाले पागलों से सावधान रहने की हिदायत दे रहा हैं क्योंकि यही लोग बाज़ार के खिलाफ क्रांति लाने की कोशिश कर रहे हैं।

उपभोक्ताओं का बाज़ार व्यवस्था में सामंजस्य स्थापित करना

जैसे की पहले भी कहा जा चुका की बाज़ार एक व्यवस्था है जो हमने बनाई है यह बाज़ार व्यवस्था सुचारु रूप से गतिशील होनी चाहिए परंतु जब इसका हमारे जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ने लगे, हमारी दुनिया इसके आगे–पीछे चलने लगे तो हम सबको समझना पड़ेगा की हमारे जीवन में इस से महत्वपूर्ण भी बहुत सारे आयाम है जैसे शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य, संतुष्टि, आपसी सम्बंध, आध्यात्मिक जीवनशैली, समय प्रबंधन, आदि जिन पर हमने सोचना या ध्यान देना छोड़ दिया है। धन–दौलत, आलीशान घर, उच्च पद, बड़ी गाड़ियां, महंगे मोबाईल फोन, ब्रांडेड कपड़े, आभूषण इत्यादि, सब की ख्वाइशें बन गई हैं इन्हे पाने के लिए आज की पीड़ी दिन–रात मेहनत करने मे लगी है और कुछ लोग चोरी, डकैती और धोखाधड़ी से यह सब पाना चाहते हैं। ऐसा नहीं है की इंसान की आगे बढ़ने की सोच गलत हैं पर आगे बढ़ने की होड़ में अपने आत्मिक शांति को खो देना गलत है और यही हो रहा है। " पागलखाना " उपन्यास इसी ओर ध्यान केंद्रित करता है। उपन्यास के अंत तक पागलों का बाज़ार के प्रति विरोध और विद्रोह जारी दिखाया गया है। अंततरू समय के विद्रोह , "हुजूर, समय अगर विद्रोह पर उतर आए तो फिर कोई कुछ भी नहीं कर पाता। 'मैकेनिक ने बात–बात में बड़ी फिलोसॉफिकल सी बात कह डाली थी।''[14] अर्थात जब जनमानस बाज़ार के प्रति जागरूक हो जाए तो बाज़ार भी बच नहीं सकता।

निष्कर्ष

ज्ञान चतुर्वेदी का "पागलखाना" उपन्यास पागल किरदारों के माध्यम से जो वास्तव में पागल नहीं है पर वह बाजार के खिलाफ है इसलिए पागल घोषित किए जा चुके है और परिवार, समाज, डाक्टरों, मुख्यतः बाज़ार ने भी इन्हे पागल घोषित कर दिया है क्योंकि यह मुट्ठी भर लोग बाज़ार की मुख्यधारा के विपरीत, बाज़ार के प्रभाव से अलग अपनी जिंदगी जीने की कोशिश कर रहे है, बाज़ार की कैद से छूटकर अपनी स्वतंत्र और खुशहाल होकर जीवन गुजारने वालों की संघर्ष की कथा है यह। इस उपन्यास का आधुनिक युग में, फैंटसी शैली मै लिखे जाने और व्यंग्य उपन्यास होने के बावजूद यह पाठकों का यथार्थ से परिचय करा देता है।

लेकिन यह भी कटु सत्य है की आज के युग में बाज़ार के बिना जीवन की कल्पना भी संभव नहीं है परंतु बाज़ार एक व्यवस्था ही है जो हमारे जीवन की हर सही और गलत फैसले में जाने–अनजाने शामिल हो रही है और अपना वर्चस्व स्थापित कर रही है। हमारे विचारों में अपनी मजबूत पैठ बना रही है। इस बाज़ार व्यवस्था में रहते हुए हमें हमारे मूल्यों, रिश्तों, संस्कृति, लोक जीवन, कला, साहित्य को समृद्ध करना है न की इन्हे बाज़ार को समर्पित कर देना है। बाज़ार को हमने अपनी जरूरत के लिए स्थापित किया है न की बाज़ार ने हमें। "पागलखाना" उपन्यास कुछ इस तरह के प्रश्न और उनके जवाब के साथ पाठकों को सोचने के लिए विवश करता है और फिर से इसी बाज़ार में रहकर किस प्रकार सामंजस्य बैठाना है यह व्यंग्य के जरिए हमें सचेत करता है। उपन्यास में लेखक का उद्देश्य पाठक को भावुक करने के साथ–साथ उसे सचेत करने का भी है।

संदर्भ सूची

1. ज्ञान चतुर्वेदी, "पागलखाना" राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ संख्या दृ 9
2. वही, पृष्ठ संख्या – 22, 23
3. सुरेश कान्त, "हिंदी गद्य लेखन में व्यंग्य और विचार", राधाकृष्ण प्रकाशन,दिल्ली, 2004
4. ज्ञान चतुर्वेदी, "पागलखाना" राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ संख्या – 22,23
5. भारतीय संस्कृति का अनोखा स्वरूप- https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/unique-form-of-indian-culture
6. ज्ञान चतुर्वेदी, "पागलखाना" राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ संख्या – 25
7. वही, पृष्ठ संख्या – 26
8. वही, पृष्ठ संख्या – 30,31
9. वही, पृष्ठ संख्या दृ 31
10. शरद जोशी "यथासंभव", भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1985
11. ज्ञान चतुर्वेदी, "पागलखाना" राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ संख्या – 112
12. वही, पृष्ठ संख्या – 114
13. वही, पृष्ठ संख्या – 132
14. वही, पृष्ठ संख्या – 271